ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No: UPBIL04292,
RNI REG.No.:UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No. 561/2013-14
Vol.-5, No.-I, PP-225-227, YEAR JUNE 2016

प्रचीन काल में पशुपालन

❑ डॉ0 इन्द्र प्रताप सिंह

सार– मानव ने जीवन यापन के लिये प्रथमतः जो उपादान तलाशा उनमे प्रमुख है– पशुपालन । पालतू पशु शक्ति के कारण मनुष्य का सहयोगी था, जिससे कृषि उत्पादन, व्यवसाय और व्यापार फलित होता था।

भारत में पशुपालन की प्रवृति के पीछे दो कारण थे– देवताओ का वाहन एवं देवांश का श्भागीदारश होना। जहाँ बैल को शंकर का वाहन माना जाता था, वही गौ को माता माना जाता था। पाषाणकाल में लोग घुमक्कड़ चरवाहों की तरह जीवन व्यतीत करते थे। जंगली पशुओं के शिकार से मांस, चमड़ा, हड्डी आदि प्राप्त करते थे, जिसका प्रयोग दैनिक जीवन में करते थे। अपने पालतू पशुओं का उपयोग शिकार में सहयोग के लिये तथा सामान ढोने के लिये करते होगें। शैलचित्रों एवं उत्खनन से प्राप्त मानव अस्थिपंजरों के साथ पशु के अस्थिपंजरों का प्राप्त होना, पालतू पशुओं की प्रमाणिकता को इंगित करता है। संभवतः मानव ने इन्ही पशुओं के सहारे कृषि कार्य का श्रीगणेश किया हो।

नवपाषाण काल में पशुपालन की प्रवृति को बढ़ावा मिला। उस काल के उत्खनित पुरास्थलों से प्राप्त अवशेषों से यह बात होता है कि गाय, बैल, भेड़–बकरी, गधा, घोड़ा आदि पाले जाते थे।

सिन्धु सभ्यता से अनेक नए पशुओं के प्रमाण प्राप्त होते है। स्थायी आवास के कारण पशुपालन एवं कृषि को बढ़ावा मिला। कृषि उपकरणों और उसके प्रयोग के लिये सहयोगी साधनों की खोज की गई। पशुओं के द्वारा जुताई होती थी एवं अनाज ढ़ोने का काम किया जाता था। बैल और घोड़ें विशिष्ट उपयोगी पशु की श्रेणी में आते थे। इनके भोजन के लिये घोड़–चना एवं चारे का प्रयोग होता था।

वैदिक काल में पालतू पशुओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई। इनकी आर्थिक उपयोगिता के अतिरिक्त धार्मिक भ्भावना और विश्वास जुट गये। पशुओं की पूजा की जाने लगी। अब पशु से पशुधन हो गया। यह काल प्रमुख रूप से कृषि और पशुपालन की मिश्रित अर्थव्यवस्था का था। ऋग्वेद में गाय, बैल, घोड़ा, खच्चर, गधा, भेड, बकरी, कुत्रा आदि पशुओं को पालने की चर्चा मिलती है। अधिक दूध व जिनके बछड़ें जल्दी पुष्ट और स्वस्थ हो जाय, ऐसी गायों को अच्छे नस्ल का माना जाता था। सिन्धु एवं श्रावस्ती के घोड़ें अच्छे माने जाते थे, जबकि भेड़ें गंधार की प्रसिद्ध थी। पशुओं की चोरी भी होती थी, जिससे सुरक्षा के उपाय ऋग्वेद में वर्णित है। पशुओं के पुष्टाहार में जौ की अधिक महत्ता थी।

उत्तर वैदिक काल में अनेक मंत्रों द्वारा पशुओं की व्याधियों का निदान प्रारंभ हुआ। रोगों से निवारण के लिये पशु के शरीर पर सहदेवी नामक वनस्पति का लेप किया जाता था। पशुओं को दागे जाने एवं प्रजनन् संबंधी उत्सव मनाने का प्रसंग सूत्रों से प्राप्त होता है। गाय, बेल एवं घोड़ें के गले में घंटियाँ भी बाँधी जाने लगी। कौशिक सूत्र में वर्णित है कि गायों से बछड़ा उत्पन्न कराने के लिये उन्हें नमक मिश्रित खाना दिया जाता था।

बौद्धकाल में गाय, हाथी, कुत्ता, कौवा को धार्मिक अवसरों पर विशेष मान्यता प्राप्त थी। इस काल में पशु कृषि के लिये बहुपयोगी हो गये थे। इनके गोबर से खाद, इनके हड्डी के चूरे से बने खाद का उपयोग व योगदान खेतों में होता था। पशुओं के चर्बी का भी प्रयोग विभिन्न कार्यों में होता था। इस काल के पालतू पशु गाय, बैल, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊँट, बकरी, साँढ, भेड़, सूअर आदि थे। साँढ़ों को अवध्य माना जाता था एवं अच्छी नस्ल के संतान करने के लिये विशेष आहार दिया जाता था। उत्पन्न करनू राज्य पशुओं का लेखा–जोखा रखता था, जिसका अवग एक विभाग होता था। सामान्य पशु चारागाहों में चरते थे। अशोक के छठें

एसो० प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष – पशुपालन और डेयरी विभाग, श्री मुरली मनोहर टाउन पी० जी० कालेज, बलिया (उ०प्र०) भारत

शिलालेख में राजकीय पशुओं के लिये निर्मित पशुशालाओं का वर्णन मिलता है। पशुओं के शारीरिक हानियां पहुंचाने पर दण्ड का विधान था। पशुओं के दूध निकालने, ऊन काटने, ढोये जाने वाले भार आदि का विधान निहित था, ताकि उनपर निर्दयता न हो। जगह–जगह पशु चिकित्सालय व प्याऊ का भी निर्माण काराया गया।

गुप्तकाल में पशुधन द्वारा आर्थिक क्षेत्र में अधिक लाभ कमाया जाने लगा। पशुओं की भारतीय प्रजातियो का विदेशी प्रजातियों के योग से उन्नतशील नस्ल तैयार की जाने लगी। पक्षी–पालन व्यवसाय का विकास हुआ। भेड़ों से अधिक मीठा दूध प्राप्त करने के लिये विशेष प्रकार के घास को खिलाया जाता था। रोगनाशक औषधि शप्रियंकाश को गोशाला में रोपा जाता था। अब पशुओं का पालन बड़ी संख्या में किया जाने लगा। इस प्रकार इन पशुओं का पालन ने खेती का रूप ले लिया। जिससे अलग–अलग उद्योग विकसित हुये एवं आय में भी बढ़ोतरी हुई।

1. दुग्ध उद्योग – प्राचीन काल से दूध तथा दूध से बनी सामग्रियों की प्रचुरता थी। फलतः लोगों का स्वास्थ्य भी ठीक रहता था एवं आमदनी भी होती थी। हड़प्पा से प्राप्त बर्तनों पर विविध पशुओं की आकृतियाँ इसकी महत्ता को प्रदर्शित करती है। ऋग्वेद में गायों के उत्पादन में वृद्धि की प्रार्थना के उल्लेख प्राप्त होते हैं। दूध से प्राप्त मक्खन को सुरक्षित रखने के लिये चमड़े के थैलों का वर्णन मिलता है। गायों के पालन का व्यापक ज्ञान इस उद्योग के विकास को सूचित करता है। मौर्यकाल के लोग दूध को बहुत दिनों तक सुरक्षित रखने के तरीके को भली– भांति जानते थे। दूध को सुखा कर पाउडर बनाने की परंपरा भी विकसित थी। दूध की मात्रा के अनुसार, गायों का नामाकरण किया जाता था। धेनु उन्नत किस्म की गाय थी। वाजसनेयी संहिता में वर्णित – अधिक दूध कैसे प्राप्त किया जाय एवं उसकी औषधि इसकी बढ़ती मांग का द्योतक है।

पक्षी–पालन उद्योग – हड़प्पा के अनेक ठिकरों पर निर्मित पक्षियों की आकृति इसके अति प्राचीन होने का प्रमाण है। चिडिमार तथा व्याध शब्द साहित्यों में प्रयुक्त हुये है। अजन्ता की गुफा में भी व्याध का चित्र अंकित है। यह इस बात की पुष्टि करता है कि प्राचीन काल से एक विशेष वर्ग इसका व्यवसाय करता था। इसका अंडा एवं मांस भोजन में प्रयुक्त होता था। अशोक के शिलालेख में भी दो मोर के मारे जाने की बात कही गई है एवं बाद में इसे वृंद करने की भी बात कही कही गई गई है। सुश्रुत संहिता के अनुसार, विशिष्ट परिस्थितियों में खास पक्षियों का भक्षण आवश्यक माना है। अतः पक्षियो के मांस का व्यवसाय गतिशील था।

मत्य पालन उद्योग – सभ्यताओं का विकास नदियो के किनारे हुआ। संभव है जल से मछलियों को प्राप्त करना सरल था। साहित्यिक तथा पुरातात्विक साक्ष्यों से यह स्पष्ट होता है कि यह उद्योग सभ्यता के साथ चला आ रहा है, क्योंकि मछलियों की उपयोगिता अनेक दृष्टियों से सदा रही है। पुरातात्विक अवशेषो में मछली के काटे, मृदभांडो पर उसके चित्रांकन व शैलखण्डो पर भी अंकित चित्र प्राप्त हुये हैं।श विविध प्रकार की वंशियाँ, जाल आदि अवशेष इसके उद्योग होने की पुष्टि करता है। अर्थशास्त्र में सूखाकर मछली दूसरे देशों में भेजे जाने का वर्णन मिलता है। सुश्रुत संहिता में भी स्वच्छ जल की मछली एवं समुद्र की मछलियों का वर्णन है, अर्थात् मत्स्य पालन एक व्यवसाय के रूप में समाज में प्रतिपादित था।

सिल्क उद्योग – रेशम के कीड़ें से सिल्क प्राप्त किया जाता है। इन कीड़ों को अलग–अलग पेड़ों पर पाला जाता है। महाकाव्यों में रेशम उद्योग के संबंध में विशेष जानकारी मिलती है। संस्कृत साहित्य में रेशमी वस्त्र के लिये क्षोम, कौशेय आदि प्रयुक्त हुये हैं। रामायण में भी रेशम के कीड़े को पाले जाने वाले क्षेत्र की चचर्चा है। अलग–अलग वृक्षों पर पाले गये कीड़े अलग–अलग रंग के रेशम निर्माण करते थे। पीला रेशम नाग वृक्ष पर पाले गये कीड़े से प्राप्त होता था। लकुच वृद्धा से गेहुँवन रंग के , बकुल पर सफेद एवं वट वृक्ष पर पाले गये कीड़े से मक्खन जैसा रेशम प्राप्त होता था। उच्चवर्ग के लोग रेशमी वस्त्रो का प्रयोग करते थे, जिससे इसकी माँग श्भारत एवं उसके बाहरी देशों में भी थी।

शहद उद्योग – ऋग्वेद में मधुमक्खियों द्वारा विविध ग्रहों एवं नहात्रों की स्थिति के अनुसार, शहद तैयार करने का उल्लेख है। शहद उद्योग अति प्राचीन उद्योग रहा है। रामायण में बनवासियों के लिये यह सामान्य आहार बताया गया है। विविध साहित्यिक ग्रंथों में भी शहद का उल्लेख है। शहद औषधि के लिये भी प्रयुक्त होता है। सुश्रुत संहिता में इसकी व्यापक चर्चा की गई है। सात प्रकार की मक्खियों से सात प्रकार के मधु प्राप्त होने का संकेत मिलता है। भौरों के शहद को भ्रामर कहा जाता था।

इस प्रकार प्राचीन भारत में पशुपालन कृषि की एक मजबूत शाखा थी, जिसपर सिर्फ व्यक्ति ही नहीं वरण

उद्योग–व्यवसाय के रूप में प्रदेश की भी अर्थव्यवस्था निर्भर करती थी। यह काफी उन्नतिशील थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. पशुपालन एवं पशुचिकित्सा विज्ञान, लेखकः पी. डी. चौधरी।
2. पशुपालन की एक पाठ्यपुस्तक, लेखकरू जी.सी. बनर्जी।
3. पशुपालन और पशु चिकित्सा विज्ञान, लेखकः डी.एन. पांडे।
4. https://www.frontierspartnerships.org/journals/pastoralism-research-policy-and- practice
5. https://dahd.gov.in/
6. https://cgbse.nic.in/curriculam/12th/XII-430.pdf

*****